* प्रेमवाटिका *

मोहन छबि 'रसखानि' लखि, अब दृग अपने नाहिं ।।
ऐंचे आवत धनुष से, छूटे सर से जाहिं ।।१।।
बंक विलोकनि हँसनि मुरि, मधुर बैन रस सानि, ।।
मिले रसिक रसराज दोऊ, हरखि हिये 'रसखानि' ।।२।।
देख्यो रूप अपार, मोहन सुंदर श्याम को, ।।
वह ब्रजराजकुमार, हिय जिय नैनन मैं बस्यो ।।३।।
या छबि पे 'रसखानि' अब, वारो कोटि मनोज ।।
जाकि उपमा कविन नहिं, पाई रहे सु खोज ।।४।।
प्रेम अयनि श्रीराधिका प्रेम बरन नंदनंद, ।।
प्रेमवाटिका के दोऊ, माली–मालिन द्वंद ।।५।।
प्रेम–प्रेम सब कोऊ कहत, प्रेम न जानत कोय, ।।
जो जन जाने प्रेम तो, मरे जगत क्यों रोय ।।६।।
प्रेम अगम अनुपम अमित, सागर–सरिस बखान ।।
जो आवत एहि ढिग, बहुरि , जात नाहिं 'रसखानि' ।।७।।
प्रेम बारुनि छानिकै, बरुन भये जलधीस ।।
प्रेमहिं ते विष पान करि, पूजे जात गिरीश ।।८।।
प्रेम रूप दर्पन अहौ, रचे अजूबो खेल ।।
यामें अपनो रूप कछु, लखि परि है अनमेल ।।९।।
कमलतंतु सों छीन अरु, कठिन खड़ग की धार ।।
अति सूधो टेढ़ो बहुरि, प्रेम पंथ अनिवार ।।१०।।

लोक–वेद–मरजाद सब, लाज काज संदेह ।।
देत बहाये प्रेम करि, विधि निषेध को नेह ?।।११।।
कबहुं न जा पथ भ्रम तिमिर, रहै सदा सुखचंद ।।
दिन–दिन बाढत ही रहै, होत कबहुं नहिं मंद ।।१२।।
भले वृथा करि पचि मरै, ज्ञान गरूर बढ़ाय ।।
बिना प्रेम फीको सबै, कोटिन किये उपाय ।।१३।।
श्रुति पुरान आगम स्मृतिहि, प्रेम सबहिं को सार ।।
प्रेम बिना नहिं उपज हिय, प्रेम बीज अंकुवार ।।१४।।
आनंद अनुभव होत नहिं, बिना प्रेम जग जान ।।
कै वह विषयानंद कै, ब्रह्मानंद बखान ।।१५।।
ज्ञान कर्म'रु उपासना, सब अहमिति को मूल ।।
दृढ निश्चय नहिं होत, बिन किये प्रेम अनुकूल ।।१६।।
शास्त्रन पढ़ि पंड़ित भये, कै मौलवी कुरान ।।
जुपै प्रेम जान्यो नहीं, कहा कियो 'रसखानि' ।।१७।।
काम, क्रोध, मद, मोह, भय, लोभ, द्रोह, मात्सर्य ।।
इन सबही ते प्रेम है, परे कहत मुनिवर्य ।।१८।।
बिन गुन जोबन रूप धन, बिन स्वारथ हित जानि ।।
शुद्ध कामना ते रहित, प्रेम सकल 'रसखानि' ।।१९।।
अति सूछ्म कोमल अतिहि, अति नियरो अति दूर ।।
प्रेम कठिन सब तें सदा, नित इकरस भरपूर ।।२०।।
जग में सब जान्यो परे, अरु सब कहै कहाय ।।
पै जगदीस'रु प्रेम यह, दोऊ अकथ लखाय ।।२१।।

जेहि बिनु जाने कछुहि नहिं, जान्यो जात बिसेस ।।
सोई प्रेम जेहि जानि कै, रहि न जात कछु सेस ।।२२।।
दंपति सुख अरु विषय रस, पूजा निष्ठा ध्यान ।।
इन तें परे बखानिये, शुद्ध प्रेम 'रसखानि' ।।२३।।
मित्र कलत्र सुबंधु सुत, इन में सहज सनेह ।।
शुद्ध प्रेम इन में नहिं , अकथा कथा सबिसेह ।।२४।।
इक अंगी बिनु कारनहि, इकरस सदा समान ।।
गनै प्रियहि सर्वस्व जो, सोइ प्रेम प्रमान ।।२५।।
डरै सदा, चाहे न कछु, सहै सबै जो होय ।।
रहै एक रस चाहि कै, प्रेम बखानो सोय ।।२६।।
प्रेम प्रेम सब कोऊ कहै, कठिन प्रेम की फांस ।।
प्रान तरफि निकरै नहीं, केवल चलत उसाँस ।।२७।।
प्रेम हरि को रूप है, त्यों हरि प्रेम सरूप ।।
एक होइ द्वै यों लसे, ज्यों सूरज अरु धूप ।।२८।।
ज्ञान, ध्यान, विद्या, मती, मत, विश्वास, विवेक ।।
बिना प्रेम सब धूर है, अग जग एक अनेक ।।२९।।
प्रेम फांस में फँसि मरे, सोइ जिये सदाहिं ।।
प्रेम मरम जाने बिना, मरि कोऊ जीवत नाहि ।।३०।।
जग में सब तें अधिक अति, ममता तनहिं लखाय ।।
पै या तनहूं ते अधिक, प्यारो प्रेम कहाय ।।३१।।
जेहि पाये वैकुंठ अरु, हरिहूं की नहिं चाहि ।।
सोइ अलौकिक शुद्ध , शुभ, सरस सुप्रेम कहाहि ।।३२।।

कोऊ याहि फांसी कहत, कोऊ कहत तरवार ।।
नेजा भाला तीर कोऊ, कहत अनोखी ढार ।।३३।।
पै मिठास या मार के , रोम रोम भरपूर ।।
मरत जियै झुकतो थिरै, बने सु चकनाचूर ।।३४।।
पै एतो हूँ हम सुन्यौ , प्रेम अजूबो खेल ।।
जाँबाजी बाजी जहाँ, दिल का दिल से मेल ।।३५।।
सिर काटो छेदो हियो, टूक टूक करि देहु ।।
पै याके बदले विहँस, वाह वाह ही लेहु ।।३६।।
अकथ कहानी प्रेम की, जानत लैली खूब ।।
दो तनहूँ जहँ एक भे, मन मिलाइ महबूब ।।३७।।
दो मन इक होते सुन्यौ, पै वह प्रेम न आहि ।।
होइ जबै द्वै तनहुँ इक, सोइ प्रेम कहाहि ।।३८।।
याही तें सबु मुक्ति तें, लही बड़ाई प्रेम ।।
प्रेम भये नस जाहीं सब, बंधे जगत के नेम ।।३९।।
हरि के सब आधीन पै, हरि प्रेम आधीन ।।
याही तें हरि आपुही, याहि बड़प्पन दीन ।।४०।।
वेद मूल सब धर्म यह, कहै सबै श्रुति सार ।।
परम धर्म है ताहु तें, प्रेम एक अनिवार ।।४१।।
जदपि जशोदा नंद अरु, ग्वाल बाल सब धन्य ।।
पै या जग में प्रेम कों, गोपी भई अनन्य ।।४२।।
या रस की कछु माधुरी, ऊधो लही सराही ।।
पावै बहुरि मिठास अस, अब दूजो को आही ।।४३।।

श्रवन कीरतन दरसन ही, जो उपजत सोई प्रेम ।।
शुद्धाशुद्ध विभेद तें, द्वै विध ताके नेम ।।४४।।
स्वारथ मूल अशुद्ध त्यों, शुद्ध स्वभावानुकूल ।।
नारदादि प्रस्तार करि, कियो जाहीं को तूल ।।४५।।
रसमय स्वाभविक बिना स्वारथ अचल महान ।।
सदा एक रस शुद्ध सोई, प्रेम अहै 'रसखान' ।।४६।।
जातें उपजत प्रेम सोई, बीज कहावत प्रेम ।।
जामें उपजत प्रेम सोई, क्षेत्र कहावत प्रेम ।।४७।।
जातें पनपत बढत अरु फूलत, फलत महान ।।
सो सब प्रेम हिं प्रेम यह कहत रसिक 'रसखान' ।।४८।।
वही बीज अंकुर वही, एक वही आधार ।।
डाल, पात, फल, फूल सब, वही प्रेम सुखसार ।।४९।।
जो जातें, जामें बहुरि, जाहित कहियत बेस ।।
सो सब प्रेम हिं प्रेम है, जग 'रसखान' असेस ।।५०।।
कारज कारन रूप यह, प्रेम अहै 'रसखान' ।।
कर्ता, कर्म, क्रिया, करन, आपही प्रेम बखान ।।५१।।
देखि गदर हित साहबी, दिल्ली नगर मसान ।।
छिनहीं बादसा बंस की, ठसक छोरी 'रसखान' ।।५२।।
प्रेम निकेतन श्रीबनहिं, आई गोवर्धन धाम ।।
लह्यो सरन चित्त चाहि कै, जुगल स्वरूप ललाम ।।५३।।
तोरि मानिनि तें हियो, फोरी मोहनी मान ।।
प्रेम देव की छबिहि लखि, भये मियाँ 'रसखान' ।।५४।।

बिधु [१] सागर [४] रस [६] इंदु [१], सुभ बरस सरस 'रसखानि' ।।
प्रेमवाटिका रचि रुचिर, चिर हिय हरख बखानि ।।५५।।

अरपी श्रीहरि चरन जुग, पदुम पराग निहार ।।
बिचरहिं यामे रसिकवर, मधुकर निकर अपार ।।५६।।

राधा–माधव सखिन संग, बिहरत कुंज कुटीर ।।
रसिकराज 'रसखानि' तहँ, कूजत कोईल कीर ।।५७।।

****